कोणार्क

जीवन परिचय

जगदीश चंद्र माथुर

जगदीश चंद्र माथुर का जन्म 16 जुलाई सन् 1917 में उत्तरप्रदेश के खुर्जा नगर में हुआ। आपके ऊपर माता-पिता के त्याग तपस्या एवं संस्कारित जीवन का अमिट प्रभाव पड़ा।

नाटकों में विशेष रुचि होने के कारण छात्र जीवन से ही आपको रंगमंच के सम्पर्क में आने का अवसर मिला। आपके प्रयास से ही विश्वविद्यालय के रंगमंच पर अभिनीत होने वाले हिन्दी नाटकों को गति मिली।

श्री जगदीश चंद्र माथुर बिहार राज्य के शिक्षा सचिव, आकाशवाणी के महानिदेशक, सूचना प्रसारण मंत्रालय के संयुक्त सचिव, नेशनल स्कूल ऑफ ड्रामा नई दिल्ली के अध्यक्ष तथा केन्द्रीय गृह मंत्रालय में हिन्दी सलाहकार रहे।

नाटककार श्री जगदीशचंद्र माथुर 14 मई, सन् 1978 को दिव्य ज्योति में लीन हो गये।

कोणार्क, शारदीया, भोर का तारा, ओ मेरे सपने, दस तस्वीरें, बोलते क्षण व रीढ़ की हड्डी आदि उनकी उल्लेखनीय रचनाएँ हैं।

ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि पर लिखे गए एकांकियों की भाषा तत्सम-प्रधान संस्कृतनिष्ठ है। वाक्य विन्यास दीर्घ है, लेकिन उनमें बोधगम्यता तथा सरलता है। भाषा सरल,

केन्द्रीय भाव-: कोणार्क का सूर्य मन्दिर उड़ीसा प्रान्त में पुरी के निकट समुद्रतट पर स्थित है। कोणार्क मात्र एक भौतिक स्मारक नहीं; बल्कि भारत के सांस्कृतिक वैभव की धरोहर भी है। कोणार्क मन्दिर भगवान भास्कर (सूर्य) के विशाल रथ के प्रतिरूप में निर्मित है। प्रस्तुत एकांकी में इस मन्दिर के कलश स्थापन के समय आए व्यवधान-काल का चित्रण है। एकांकी में कोणार्क मन्दिर के निर्माण की पृष्ठभूमि और प्रेरणा के साथ - साथ उसके शिल्प तथा शिल्पियों के मनोभावों का भी उल्लेख किया गया है। कोणार्क के शिल्प में मानवीय ही नहीं, जीवन का मूर्तिमय अंकन है। इसमें लोकरंजन ही नहीं, जीवन का आदि और उत्कर्ष भी समाहित है। एकांकी का चरमबिन्दु है महादण्डपाशिक की वह क्रूर आज्ञा जिसमें कलश स्थापित न होने पर शिल्पियों के हाथ काटने का दंड निश्चित किया गया है। एकांकी में तत्कालीन सामाजिक और राजव्यवस्था की झलक भी दिखाई देती है। एकांकी का अंत सुखद है।

एक कक्ष का भीतरी भाग। मन्दिर की विशाल चहारदीवारी के भीतर मुख्य मंदिर से लगभग पचास गज दक्षिण-पूर्व की ओर एक भोग मन्दिर है। यह कमरा उसी में स्थित है और मन्दिर के निर्माण के दिनों में महाशिल्पी विशु का निवास - स्थान है । सामने तीन द्वार हैं; जिनमें से बीचवाले को छोड़कर बाकी दोनों खिड़की जान पड़ती हैं। खिड़की के बराबर स्तम्भ हैं। खिड़कियों और सामने वाले द्वार में से मुख्य मंदिर और जगमोहन की झलक दिखायी पड़ती है - पूरी झलक नहीं, सिर्फ मेधि से ऊपर और छत्र से नीचे का वेश जिस पर अंकित कुछ सुन्दर मूर्तियाँ दृष्टिगोचर होती हैं । मन्दिर की यह झलक जितनी सजावटपूर्ण है, उसकी अपेक्षाकृत महाशिल्पी का निवास स्थान, यह कमरा अत्यन्त सादा और अलंकार विहीन है। इधर-उधर कुछ आधी उत्कीर्ण मूर्तियाँ पड़ी हैं। कुछ पाषाण खण्ड रखे हैं, जिन पर की गई खुदाई नजर पड़ रही है। कुछ छैनियाँ और अन्य औजार भी पड़े हैं। बाँयी खिड़की के पास एक लम्बी चौकी रखी है, जिसके सिरहाने की तरफ लकड़ी की ऊँची पीठ है, जैसी कि अक्सर प्राचीन सिंहासनों में हुआ करती थी। चौकी पर एक सादा कालीन बिछा है। चौकी पर भारी चिन्तित अवस्था में बैठे हैं महाशिल्पी विशु। उनके हाथ चौकी की पीठ पर हैं और हाथों पर ठुड्डी है। हमें उनका पूरा मुख नहीं दिखाई पड़ता क्योंकि उनकी दृष्टि बीच वाले द्वार में होती हुई मुख्य मन्दिर पर पड़ी हुई है। कमरे में आने का एक द्वार दाहिनी तरफ भी है और इस दृश्य में अधिकतर अभिनेता इसी द्वार से आते-जाते हैं। इस समय इस द्वार के निकट कोणार्क के

सहज एवं प्रवाहपूर्ण है।

नाटको एवं एकांकियों में नए-नए विषयों को लिया गया है। भारतीय प्रशासनिक सेवा के अधिकारी, आधुनिक युग के सफल नाटककार एवं एकांकीकार श्री जगदीशचंद्र माथुर का हिन्दी के नाटककारों में विशिष्ट स्थान है।

प्रधान पाषाण-कोर्त्तक राजीव खड़े हैं। ऐसा मालूम होता है कि अभी बाहर से आए हैं और उन्होंने कुछ कहना समाप्त किया है।

बातचीत के बीच में कभी-कभी मन्दिर की तरफ से पत्थर पर खुदाई की आवाज आती है, जिसमें मालूम होता है कि काम जारी है।]

विशु : कब? आखिर कब हम अम्ल के ऊपर त्रिपटधर को स्थापित कर पाएँगे? आज दस रोज हो गए, केवल इसी के कारण मूर्ति का प्रतिष्ठापन नहीं हो रहा है। (राजीव की ओर मुँह करके) राजीव, तुम कहते हो कि तुमने कलश के अधोअंश को और हल्का कर दिया?

राजीव: हाँ, फिर भी कलश ठहर नहीं पाया । मैंने अम्ल के हर एक अनुपात को फिर से नापा । कहीं कमी नहीं।

विशु : छप्र के ऊपर वाली भूमि के जोड़ तो ठीक हैं न ?

राजीव: वे सब जोड़ तो आप ही ने अपने हाथों से स्थापित किए थे।

विशु: जानता हूँ । लेकिन मन्दिर की महती कल्पना मेरी बुद्धि के परे हो चली है। मुझे न मालूम था कि सूर्यदेव के जिस विशाल वाहन का स्वप्न मैं देखा करता था, वह सच्चा होते -होते इस पार्थिव धरातल से उठकर भगवान भास्कर के चरण छूने के लिए उतावला हो उठेगा।

राजीव: राजनगरी के ज्योतिषी भानुदत्त का कहना है .....

[नेपथ्य में निकट आते नूपुरों की ध्वनि। सौम्य श्री का प्रवेश। सिर पर उष्णीय, कानों में मकरकुंडल, गले में हार, हाथों में मंजीर - मानो विशेषत: तैयार होकर आए हों।]

सौम्य : यह ठीक रहेगा न विशु? (अपने वेश-भूषा को दिखाते हैं।).....

कोई कमी तो नहीं है, नाट्याचार्य की वेश-भूषा में?

राजीव : हाथों में वीरशृंखला कहाँ है, तात सौम्य श्री?

सौम्य : इतना भी नहीं समझे राजीव? हाथों में मंजीर देखते हो ? मंजीर बजाने की भंगिमा यदि नहीं हो तो वह नाट्याचार्य की मूर्ति क्यों कर लगेगी? और यदि मंजीर बजाना है तो सुवर्ण-श्रृंखला कलाइयों मे कैसे ठहर सकती है?

राजीव : समझा तात।

सौम्य : लेकिन तुम्हारा क्या विचार है विशु? हाथों को कटक मुद्रा में रखूँ न? यह देखो, बाएँ हाथ में मंजीर को उल्टा करके इस तरह रखूँगा। (बाएँ हाथ वाली मंजीर को वृक्ष से लगाकर उलट कर रखता है।) और दायें हाथ को ऊपर से कटक मुद्रा में इस तरह (दिखाता है।)-मानो मंजीर बजाकर मैं नर्तकियों को संकेत दे रहा हूँ। ठीक है न? - (विशु को चुप और ध्यानमग्न देख कर रुक जाता है।) मामला क्या है विशु ?

विशु : (राजीव से) ज्योतिषी क्या कहता है, राजीव?

राजीव : कहता है कोणार्क देवालय ज्यों ही पूरा होगा त्यों ही इसके पत्थरों में पंख लग जाएँगे और सारा

मन्दिर आकाश में उड़ जाएगा।.....

सौम्य : मैंने भी सुनी थी वह भविष्यवाणी । लेकिन एक परिवर्तन चाहता हूँ।

राजीव : वह क्या तात सौम्य श्री?

सौम्य : मन्दिर उड़ेगा नहीं। नाट्याचार्य सौम्यश्री के संकेत पर जब नट-मन्दिर में देवदासियाँ नृत्य करेंगी, तो ताल देने के लिए कोणार्क देवालय ही थिरक उठेगा!

ताथेई, ताथेई था.....

[नृत्यभंगिमा में पदक्षेप करता है।]

विशु : परिहास की बात नहीं है बन्धु!

सौम्य : विशु, तो क्या तुम सच मानते हो कि कोणार्क के ये भारी पत्थर, ये विशालकाय मूर्तियाँ गगनगामी हो जाएँगी?

विशु : (**विचारपूर्ण मुद्रा**)कह नहीं सकता। पर एक बात अवश्य है । हमने पत्थर में जान डाल दी है, उसे गति दे दी है। (**सोत्साह**) वह भूल रहा है कि वह धरती का पदार्थ है। उसके पैर धरती पर नहीं टिकते। पत्थर का यह मंदिर आज कल्पना के स्पर्श से हवा की तरह गतिमान, किरण की तरह स्पर्शहीन, सुगन्ध की तरह सर्वव्यापी हो रहा है। लेकिन ..... लेकिन धरती उसे जकड़े हुए है, ईर्ष्या से ।..... मुझे लगता है, जैसे अनजाने ही हम लोगों ने पृथ्वी और आकाश के बीच भीषण संघर्ष खड़ा कर दिया है।

सौम्य : पृथ्वी और आकाश के संघर्ष की बात फिर सोचना विशु। उत्कर्ष के पृथ्वीपति की क्रोधाग्नि झेलने का भी कोई प्रबंध किया है?

विशु : महाराज श्री नरसिंहदेव की क्रोधाग्नि? उसे तो करुणा की फुहारें क्षण भर में शान्त कर देती हैं।

सौम्य : लेकिन वही फुहारें जब गर्म तवे पर पड़ती हैं, तो उसकी जलन और भी बढ़ जाती है और फुहारें छू-मन्तर हो जाती हैं ।

विशु : तुम्हारा मतलब ?

सौम्य : उत्कल नरेश का क्रोध चाहे चाहे क्षणिक भले ही हो, लेकिन महामात्य राजराज चालुक्य उसे प्रज्ज्वलित रखते हैं और उन्होंने दया से पसीजना नहीं सीखा है।

विशु : महामात्य चालुक्य राज्य के सब कुछ नहीं हैं।

सौम्य : तुम भ्रम में हों, बंधु! महाराज नरसिंहदेव तो बंगप्रदेश में यवन को पराजित करने में लगे हैं और लोग कहते हैं, राजनगरी में महामात्य ही आजकल सर्वेसर्वा हैं।

राजीव : तात, दूर -दूर से आने वाले शिल्पी, महामात्य द्वारा किए गए अत्याचारों के समाचार लाते हैं । उनमें से कितनों ही के कुटुम्बों पर महामात्य के अन्याय का हथौड़ा पड़ चुका है। दिन-प्रतिदिन तरह-तरह की आशंकाजनक खबरें आ रहीं हैं ।

सौम्य : सुना है अब तो महादण्डपाशिक के सब अधिकार भी उन्होंने हथिया लिए हैं ।

राजीव : तब तो सारे दण्डपाशिक सैनिक उनके अधीन होंगे।

सौम्य : वही तो । राज्य सेना तो बंगप्रदेश में यवनों से लड़ रही है और इधर दण्डपाशिक सैनिकों के

बल पर महामात्य की शक्ति दिन प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही है।

विशु : किसी की शक्ति बढ़े और किसी की घटे हमें तो कोणार्क को पूरा करना है।

राजीव : यदि आप धर्मपद की बात सुनें तो शायद अपना विचार बदल डालें, तात!

सौम्य : धर्मपद कौन ?

राजीव : एक किशोर शिल्पी। हाल ही में आया है। आयु तो अल्प है – शायद 16 वर्ष भी नहीं, किन्तु बुद्धि तीक्ष्ण । आपसे मिलना भी चाहता है।

विशु : क्यों?

राजीव : साफ नहीं बताता। विचित्र जीव है। कभी तो मौन हो मन्दिर के कलश की ओर निर्निमेष देखता रहता है और कभी भी अल्प समय में ही चमत्कारपूर्ण मूर्तियाँ तैयार कर देता है। कीर्तिस्तम्भ पर गायकों के रूप उसी ने उत्कीर्ण किये हैं।

विशु : एक 16 वर्ष के किशोर ने ? राजीव, मैं उससे मिलूँगा।

राजीव : कहिए तो अभी बुला लाऊँ? तात, उसकी ओजमयी वाणी में आपको विस्मृत विद्रोह का ताप मिलेगा।

विशु : शिल्पी को विद्रोह की वाणी नहीं चाहिए, राजीव मेरी कला में जीवन का प्रतिबिम्ब और उसके विरुद्ध विद्रोह दोनों सन्निहित हैं। तुम उस किशोर को बुला लाओ। मेरी दृष्टि के स्पर्श से उसकी प्रतिभा की गंध जाग्रत होकर उसकी वाणी को मौन कर देगी। मुझे उसकी कला चाहिए।

[राजीव का प्रस्थान]

सौम्य : मुझे भी उसकी कला चाहिए ।

विशु : क्या उसे नृत्य-संगीत सिखाओगे बन्धु?

सौम्य : नहीं। ..... सोचता हूँ मेरी मूर्ति तुम तो पूरा करने से रहे ! इधर मैं तैयार खड़ा हूँ । यह प्रतिभावान् किशोर ही पूरा कर देगा।

विशु : यह कैसे हो सकता है ? लाओ अभी पूरा करता हूँ। (छैनी हथौड़ी से प्रस्तरखंड पर अधूरी मूर्ति को पूरा करने में लग जाता है। सौम्य श्री को कभी-कभी सिर उठाकर देखता जाता है। सौम्यश्री तत्पर मुद्रा में खड़ा है।)

सौम्य : कितनी देर वेश – भूषा में खड़ा रहना पड़ेगा?

विशु : थोड़ी ही देर । ..... जल्दी है ?

सौम्य : नहीं। ..... प्रतिष्ठापन में जितनी ही देरी हो रही है उतना ही समय मुझे मिल जाता है, संगीतक की तैयारी के लिए।

विशु : सौमू, अगर कोणार्क पूरा नहीं हुआ तो उसे नष्ट करना होगा। और मुझे पातकी का प्रायश्चित!

सौम्य : शिल्पी, तुम विष्णु हो, शंकर नहीं। निर्माता हो संहारक नहीं। और फिर ये स्तम्भ और ये पाषाण इन्हें तो भूकम्प ही गिरा सकते हैं, अथवा काल की गति।

विशु : सौमू, जिन चुम्बक पत्थरों के आकर्षण से, सूर्य भगवान की मूर्ति निराधार स्थित है, तुमने उन्हें

ध्यान से देखा है?

सौम्य : क्या उनमें भूकम्प की शक्ति भरी है?

विशु : सुनो एक रहस्य की बात। ठीक बीच में जो चुम्बक है उससे ही मूर्ति बड़े वेग से गिर पड़ेगी और भूकम्प की भाँति ही मन्दिर की शिलाएँ और स्तम्भ गिरने लगेंगे, और–

[राजीव का प्रवेश। साथ में एक और युवक । आयु लगभग 18 वर्ष । साँवला रंग। उसके दृढ़ कपोल, तेजोमीय आँखें, घुँघराले बाल घोषित करते हैं कि वह असाधारण वृत्ति का व्यक्ति है। तंग अंगरखा और ऊँची धोती पहने है। राजीव के पीछे-पीछे आकर द्वार के निकट खड़ा होता है। जब विशु से बातें करता है, तब उसकी दृष्टि मानो विशु की काया के नीचे अन्तर्निहित किसी पुरातन विशु को खोजती है।]

राजीव : आचार्य, यही वह युवक है–धर्मपद।

विशु : तुम। (धर्मपद प्रणाम करता है) सुना है तुम आशु शिल्पी हों। इतनी छोटी आयु में तुम्हें किस गुरु ने दीक्षा दी?

धर्मपद : किसी ने नहीं आचार्य । मैं शिल्पी बना, क्योंकि मुझे जीवित रहना था।

विशु : कला तुम्हारा जीवन है, यही न?

धर्मपद : जीवन भी है और जीवन-यापन का साधन भी।

विशु : वह सारे जीवन का प्रतिबिम्ब है। देखो हमारे कोणार्क देवालय को आँखें भरकर देखो। यह मंदिर नहीं सारे जीवन की गति का रूपक है। हमने जो मूर्तियाँ इसके स्तम्भों, इसकी उपपीठ अधिस्थान में अंकित की हैं उन्हें ध्यान से देखो। देखते हो, उनमें मनुष्य के सारे कर्म, उसकी सारी वासनाएँ, मनोरंजन और मुद्राएँ चित्रित हैं। यही तो जीवन है।

धर्मपद : क्षमा करें आचार्य, शृंगार-मूर्तियों को देखते-देखते मैं अघा गया हूँ।

सौम्य : अभी से? हँ-हँ। युवक,किसी रमणी के सामने यह बात न कह देना, नहीं तो तुम्हें अविवाहित रहना पड़ेगा।

विशु : (गंभीर होकर) तो तुम उन लोगों में हो जो इन प्रणय -मूर्तियों में अश्लीलता देखते हैं, जीवन का आदि और उत्कर्ष नहीं?

धर्मपद : जीवन के आदि और उत्कर्ष के बीच एक ओर सीढ़ी है-जीवन का पुरुषार्थ। अपराध क्षमा हो आचार्य, आपकी कला उस पुरुषार्थ को भूल गई है। जब मैं इन मूर्तियों में बँधे रसिक जोड़ों को देखता हूँ तो मुझे याद आती है पसीनेमें नहाते हुए किसान की, कोसों तक धारा के विरुद्ध नौका को खेने वाले मल्लाह की, दिन-दिन भर कुल्हाड़ी लेकर खटने वाले लकड़हारे की। ... इनके बिना जीवन अधूरा है, आचार्य!

विशु : लेकिन कला नहीं। कला की पूर्ति चयन में है- छाँटने में। जंगल में तरह-तरह के फूल, पौधे, वृक्ष चाहे जहाँ उगे रहते हैं, लेकिन उपवन में माली छाँट-छाँटकर सुन्दर और मनमोहक पौधों और वृक्षों को ही रखता है।

धर्मपद : छाँटनेवाली आँखों का खेल है, आचार्य। आज के शिल्पी की आँखें वहाँ नहीं पड़ती, जहाँ धूल में हीरे छिपे पड़े हैं।

राजीव : मैं ठीक कहता था न, तात धर्मपद तर्क निपुण है?

धर्मपद : मै तर्क करने नहीं आया हूँ । मैं तो एक ऐसे संसार की ओर आपका ध्यान खींचना चाहता हूँ जो कि आपके निकट होते हुए भी आपकी आँखों से ओझल हो गया है। इस मंदिर में वर्षों से 1200 से अधिक शिल्पी काम कर रहे हैं। इनमें से कितनो की पीड़ा से आप परिचित हैं? जानते हैं आप कि महामात्य के भृत्यों ने इनमें से बहुतों की जमीन छीन ली है; कइयों की स्त्रियों को दासियों की तरह काम करना पड़ रहा है, और उधर सारे उत्कल में अकाल पड़ रहा है।

विशु : तुम समझते हो कि हम लोगों को यह सब मालूम नहीं है लेकिन राज्य की बातों में पड़ना शिल्पियों के लिए अनुचित है।

[बाहर दाहिनी ओर कुछ हलचल, मानो दूर पर अश्वारोही आ रहे हों। राजीव बाहर जाता ।]

धर्मपद: मगर यह भी तो उचित नहीं कि जब चारों ओर अत्याचार और अकाल की लपटें बढ़ रही हों, शिल्पी एक शीतल और सुरक्षित कोने में यौवन और विलास की मूर्तियाँ ही बनाता रहे। अगर मुझे महाशिल्पी के अधिकार मिले होते तो–

सौम्य : तो तुम कोणार्क को अब तक कभी का पूरा कर चुके होते हँ.....हँ.....हँ.....(अविश्वास का हास्य)

धर्मपद : पूरा करना अब भी कठिन नहीं।

[बाहर कोलाहल बढ़ रहा है]

सौम्य क्या? धर्मपद, तुम भूल रहे हो कि तुम महाशिल्पी आचार्य विशु के सामने खड़े हो । पिछले दस दिन से निरंतर चेष्टा करने पर भी ये मंदिर पर कलश स्थापित नहीं कर सके और तुम–शास्त्रीय अध्ययन और अनुभव से शून्य–तुम कहते हो, इसे पूरा करना कठिन नहीं। अपनी शक्ति से बाहर की बात न करो युवक!

विशु : (जो अब तक मौन हो इस वार्तालाप को सुनता रहा है) नहीं सौम्य मुकुन्द उसे अपनी बात कहने दो, बोलो युवक, क्या तुम अम्ल के ऊपर शिखर को स्थापित कर सकते हो? करोगे? ..... सोच समझकर उत्तर दो। यह साधारण समस्या नहीं है।

[इतनें में कोलाहल बहुत बढ़ जाता है। तेजी के साथ राजीव का प्रवेश]

राजीव : (हाँफते हुए) आचार्य! महामात्य चालुक्य आ रहे हैं।

विशु :
सौम्य : चालुक्य ! !
धर्मपद :

विशु : चालुक्य ? यहाँ आ रहे हैं, बिना पूर्व – सूचना दिए?

राजीव : जी हाँ। कई अश्वारोही साथ हैं (बाहर तुरही की आवाज) सुनिए!

[दूर से उच्च स्वर में प्रतिहारी बोलता है – ''सावधान, सावधान, श्री माहामात्य महादण्डपाशिक राजराज चालुक्य पधारते हैं, सावधान!'']

सौम्य : महादण्डपाशिक ! सुना तुमने, विशु ? (खिड़की से झाँकता है)

विशु : ऐसी जल्दी में महामात्य का हम यथोचित स्वागत कैसे कर सकते हैं ? राजीव, अन्दर से वेत्रासन तो ले आओ! (राजीव बांयी तरफ जाता है और एक वेत्रासन लेकर लौटता है)युवक, तनिक इस तोशक और चादर को भलीभाँति रख दो (धर्मपद चौकी के दो तोशक इत्यादि को ठीक करता है) सौम्य, महामात्य प्राचीर के अन्दर आ गए?

सौम्य : **(खिड़की से मुँह हटाते हुए)** वे यहीं सीधे आ रहे हैं, विशु! (रुककर) महामात्य का इस तरह सहसा आना मुझे अच्छा नहीं लगता, विशु!

[नेपथ्य में निकट आता हुआ '' स्वर सावधान, सावधान'']

राजीव : आचार्य ! वे आ गए–

[दो प्रतिहारियों का प्रवेश । प्राचीन भटों का वेश, कंधों पर गदा या खड्ग। अन्दर आकर द्वार के दोनों ओर खड़े हो जाते हैं उसके बाद महामंत्री चालुक्य आते हैं। पुष्टकाय, आयु लगभग 45, मुख पर क्रूर मुद्रा, बड़ी-बड़ी मूँछें। नेत्र छोटे हैं और बातें करते समय और संकुचित लगते हैं। बातचीत के वक्त भौहें सुकड़ जाती हैं और बाएँ हाथ से ठुड्डी सहलाते भी हैं। पोशाक पुराने ढंग से बाँधी हुई धोती, रेशमी उत्तरीय, सुवर्ण मस्तक पर, बाजू पर एक बाजूबंद, कमर में कटार। उत्तरीय कुछ लटक रहा है और एक हाथ से उसे पकड़ते हुए वेग से अंदर आते हैं। और अभ्यर्थना की उपेक्षा करते हुए बैठ जाते हैं। धर्म पद बीच वाले दरवाजे के पास खड़ा है। सौम्य श्री खिड़की के पास, राजीव दरवाजे के निकट और विशु सबके बीच में कुछ आगे सभी लोग झुककर महामात्य को प्रणाम करते हैं। कुछ क्षण के लिए स्तब्धता।]

चालुक्यः (कमरे के सभी व्यक्तियों पर सरसरी निगाह डालकर फिर विशु पर आँखें ठहरा देते हैं) तुम जानते हो मैं क्यों इस तरह सहसा आया हूँ?

विशु : आर्य के आने की कोई पूर्व सूचना नहीं मिली–

चालुक्यः सूचना देता, तो तुम लोगों का भंडा फोड़ कैसे होता?

विशु : जी?

चालुक्यः राजनगरी में मैंने ठीक सुना था कि कोणार्क में राज्य कोष नष्ट हो रहा है। न शिल्पी लोग ठीक काम कर रहे हैं न मजदूर। दस दिन हो गए कलश तक स्थापित न हो सका।

विशु : हम लोग बराबर उसी चेष्टा में लगे हुए हैं।

चालुक्यः (मुँह बनाते हुए) चेष्टा में लगे हुए हैं। ..... यहाँ तो मैं देखता हूँ गप्पें हो रही हैं। (सहसा धर्मपद पर दृष्टि पड़ जाती है) बातें करते हुए और यह युवक यहाँ क्यों खड़ा है।

धर्मपदः मैं? आचार्य के सामने शिल्पियों की दुख गाथा कह रहा था।

चालुक्यः शिल्पियों की दुख गाथा?

प्रतिहारी, इसे धक्का देकर निकालो। मुफ़्तखोर कहीं का।

धर्मपदः मैं आप ही जाता हूँ। (बीच वाले दरवाजे से प्रस्थान, आहत अभिमान की मुद्रा)

विशुः महामंत्री, आपके शब्द बहुत कटु हैं। उसे तो मैंने ही–

चालुक्यः कटु शब्द। (पैशाचिक हास्य) अब कटु शब्दों से काम नहीं चलेगा विशु। मैंने सुना है कि

शिल्पी लोग राज्य के विरुद्ध सिर उठा रहे हैं, सुवर्ण मुद्राओं में वेतन माँगते हैं, और–

सौम्यः महामात्य, आपको किसी ने बढ़ाकर ख़बर दी है। सुवर्ण मुद्रा भला ये बेचारे क्या माँगेंगे।

हाँ, यह अवश्य है कि इस अकाल के समय उनके कुटुम्बों पर महान कष्ट आ पड़ा है।

चालुक्य : देखता हूँ नाट्याचार्य, तुम भी इन लोगों से मिले हुए हो। मन्दिर पूरा होना तो अलग रहा, यहाँ– तुम लोग मिलकर राज्य पर दबाव डालने के लिए अभिसन्धि कर रहे हो । इसे –

विशु : महामंत्री मेरी भी सुनिए–

चालुक्यः चुप रहो। मैं तुम जैसे लोगों को राह पर लाने की युक्ति भली भाँति जानता हूँ (खड़ा हो जाता है) विशु, वर्षों से बिन माँगी प्रशंसा सुनते–सुनते तुम अपने को दण्डविधान से परे समझने लगे हो। आज मैं तुम्हारे इस घमण्ड को चूर करने ही आया हूँ ..... सुन लो और कान खोलकर सुन लो । आज से एक सप्ताह के अन्दर यदि कोणार्क देवालय पूरा न हुआ, तो (कुछ रुककर, शब्दों पर जोर देते हुए) तुम लोगों के हाथ काट दिए जाएँगे।

[भयाकान्त नीरव]

विशु : (अविश्वासपूर्ण स्वर में) शिल्पियों के हाथ काट लिए जाएँगे?

चालुक्यः (सरोष) हाँ, शिल्पियों के हाथ काट लिए जाएँगे आज से आठवें रोज या तो मन्दिर में सूर्यदेव की मूर्ति का प्रतिष्ठापन होगा या तुम बारह सौ व्यक्तियों की भुजाओं पर प्रहार। (द्वार की ओर बढता है, प्रतिहारी भी प्रस्थानोन्मुख होते हैं।)

चालुक्यः (रुकता हुआ) हाँ, हाँ। महाराज नरसिंहदेव की आज्ञा है। ..... और मेरी, महादण्डपाशिक की आज्ञा है (चलते समय सब लोगों पर क्रूर दृष्टि डालते हुए) उत्कल – नरेश ..... । हूँ।

[प्रस्थान । पदचाप। थोड़ी देर बाद नेपथ्य से दूर होता हुआ स्वर ''सावधान, सावधान महादण्डपाशिक राजराज चालुक्य पधारते हैं। – सावधान, सावधान'' ..... स्वर मन्द हो जाता है इधर मंच पर सब लोग चुप खड़े हैं--चिंतित]

राजीव : (नीरव तोड़ते हुए भीत स्वर में) अब क्या होगा?

[विशु अचेतन सा चौकी पर बैठ जाता है]

सौम्य : राजनगरी में अपराधियों के हाथ कटते मैंने देखे हैं। बड़ी पीड़ा होती है।

विशु : (मानो सपने में) उत्कल नरेश की आज्ञा? महाराज मेरी बरसों की सेवाओं पर इतना भीषण कुठाराघात करेंगे।

सौम्य : क्या मालूम उत्कल नरेश की आज्ञा है, या महामात्य का अपना उत्पात! हमारे पास साधन भी नहीं, समय भी तो नहीं कि ? महाराज के मन की बात जान सकें। वे अभी तक बंग विजय के उपरांत लौटे भी नहीं है।

राजीव : सात दिन ! – केवल सात दिवस के बाद हम सबों के हाथ काट लिए जाएँगे ?

सौम्य : ये हाथ ..... (काँप कर हाथों को देखता हुआ) ये हाथ ?

[सूखी हँसी]

राजीव : क्या कोई उपाय नहीं आचार्य ?

[पीछे वाले द्वार से धर्मपद आता हुआ दृष्टिगोचर होता है।]

धर्मपद : (आते-आते) एक उपाय है (सब लोग उसकी ओर देखने लगे हैं)

सौम्य : धर्मपद!

राजीव : तुम फिर आ गए? तुमको तो .....

विशु : (क्षब्ध स्वर में) युवक, वह तुम्हारा अपमान नहीं, मेरी प्रताड़ना थी।

धर्मपद : आचार्य, ठोकर खाकर धूल सिर पर चढ़ती है।

सौम्य : सिर पर चढ़ने के सपने छोड़ दो युवक! कोणार्क के प्रांगण में सात रोज बाद उत्कल के समस्त शिल्पियों का रक्त बहेगा।

धर्मपद : मैंने सुना है। मैं बाहर पास ही खड़ा था।

विशु : युवक, विनाश का वह संदेश अपने साथियों को भी सुना दो साहस नहीं कि उस विकराल घड़ी के लिए उन्हे तैयार कर सकूँ।

धर्मपद : निर्दय अत्याचार की छाया में ही जो विकसते और मुरझाते हैं, उनको एकाध विपत की घड़ी के लिए तैयार होने की जरूरत नहीं आर्य।

लेकिन मैं कहता हूँ इसकी नौबत ही क्यों आए?

विशु : मेरी बुद्धि काम नहीं दे रही है।

धर्मपद : मुझे अवसर दें आचार्य!

विशु : तुम्हें?

धर्मपद : महामंत्री के आने से पहले आपने मुझसे पूछा था-'क्या तुम अम्ल के ऊपर शिखर को स्थापित कर सकोगे?' मेरा उत्तर है आचार्य कि मुझे अवसर दिया जाए।

विशु : यदि अवसर दिया जाए तो तुम क्या करना चाहोगे?

धर्मपद : आचार्य, मुझे लगता है कि कोणार्क के कमल की पंखुड़ियाँ उल्टी हैं। उन्हें उलट देने पर कलश शायद ठहर सकेगा।

सौम्य : कोणार्क का कमल?

राजीव : तुम्हारा मतलब छप्र के ऊपर कमलाकार अम्ल से है?-

धर्मपद : जी! इसके हरेक पटल को फिर से इस तरह रखा जाए कि जो बाहरी हिस्सा है वह अन्दर केन्द्र पर हो और जो नुकीला भाग है, वह बाहर निकले तो उसकी आकृति खिले कमल की -सी हो जाएगी, कली की-सी नहीं। लेकिन कलश स्थिर रहेगा।

विशु : मानो अंधे को टिमटिमाता प्रकाश दिखा हो। युवक! तुम्हारी बात सारहीन नहीं जान पड़ती। अम्ल के केन्द्र पर शायद अधिक भार देने से कलश की यष्टि को सहारा मिले। (विचार मग्न मुद्रा)

धर्मपद : (खड़िया से एक पत्थर पर जल्दी-जल्दी आकृति खींचता हुआ) मेरे मन में जो चित्र है उसे यों पूरी तरह तो नहीं समझा सकता किन्तु, देखिए, अम्ल का आकार यदि कुछ इस तरह का हो तो-

[राजीव और विशु धर्मपद के निकट आकर रेखाचित्र का अवलोकन करते हैं।]

विशु : (ध्यान-मग्न मुद्रा में कुछ दूर हटते हुए) हूँ। .... इस बात में कुछ तथ्य हैं। ..... शायद..... शायद अम्ल के बाहरी भाग पर इस समय अनुपात से अधिक भार है ।.....अगर....अगर.....हम उस भार को हल्का कर सकें! तुम ठीक तो कहते हो युवक (खड़े होते हुए), तुम ठीक कहते हो।..... भार को हल्का करने के लिए अगर पटल को अर्न्तमुखी कर दिया जाए तो सम्भव है। धर्मपद, मेरे साथ अभी चलो हम छप्र के ऊपर चढ़कर अभी तैयारी करेंगे- पटल बदलने की। अभी (मध्य द्वार की ओर बढ़ते हुए)

धर्मपद : ठहरिये!

विशु : (मानो स्वप्न भ्रष्ट हुआ हो) ऐं!

धर्मपद : ठहरिए! यदि मेरी युक्ति सफल हो जाए और कोणार्क शिखर को हम स्थापित कर सके तो मुझे क्या मिलेगा?

विशु : तुम क्या चाहते हो? जो कुछ मेरे हाथ में है तुम्हे दूँगा।

धर्मपद : मैं चाहता हूँ कि यदि शिखर पूरा हो जाए तो एक दिन के लिए सिर्फ एक दिन के लिए मन्दिर प्रतिष्ठापन के दिन आप अपने सब अधिकार मुझे दे दें।

विशु : अगर कोणार्क पूरा हो जाता है तो एक दिन क्या सभी दिन के लिए वे अधिकार तुम्हारे हो जाएँगे। मैं तुम्हे अपने स्थान पर शिल्पी बना दूँगा।

राजीव : यह आप क्या कह रहे हैं, महाशिल्पी?

सौम्य : (साश्चर्य)विशु।

विशु : मैं ठीक कह रहा हूँ। इस युवक की प्रतिभा ने मुझे मुग्ध कर लिया है। राजीव, तुम नहीं जानते। मुझे प्रधान के पद से कोई मोह नहीं। मोह है तो यही कि कोणार्क पूरा हो जाए अब इस युवक ने ठण्डी होती हुई राख को फूँक मार कर प्रज्ज्वलित कर दिया है। मेरे हाथ मेरी भावनाएँ इसी क्षण कोणार्क को पूरा करने के लिए आतुर हैं। ..... चलो युवक!

[धर्मपद का हाथ पकड़कर मध्य द्वार से सवेग प्रस्थान]

अभ्यास

अति लघु उत्तरीय प्रश्न

1. सही विकल्प चुनकर लिखिए-

धर्मपद के प्रति विशु का अतिशय स्नेह का मुख्य कारण था-

(क) धर्मपद का आशु शिल्पी होना।

(ख) धर्मपद का निश्छल और व्यवहार कुशल होना।

(ग) धर्मपद की कला में अपनी झलक देखना।

(घ) धर्मपद का निडर एवं विद्रोही स्वभाव होना।

(ड़) घोर विपत्ति और असहायता की स्थिति मे आशा की किरण बनकर धर्मपद का आना।

2. कोणार्क मंदिर कहाँ स्थित है?
3. कोणार्क मंदिर किस देवता से संबंधित है?
4. महामात्य ने कितने दिन में मंदिर पूरा करने का आदेश दिया था?
5. विशु ने मंदिर के पूरा होने पर धर्मपद को क्या देने का वचन दिया?

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. धर्मपद कौन था? वह विशु से क्यों मिलना चाहता था ?
2. मंदिर पूरा न बनने की स्थिति में विशु ने क्या निर्णय लिया और क्यों? कारण सहित लिखिए।
3. विशु धर्मपद से क्यों प्रभावित हुए? सकारण लिखिए।
4. महामात्य के चरित्र की तीन विशेषताएँ लिखिए।
5. विशु के चरित्र पर प्रकाश डालिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. नाटक के तत्वों के आधार पर कोणार्क के बारे में लिखिए।
2. कला के संबंध में आचार्य विशु और धर्मपद के दृष्टिकोणों के अन्तर को स्पष्ट कीजिए।
3. शिल्पियों की कौन-कौन सी समस्याएँ इस नाटक में बताई गई हैं? विस्तार से लिखिए।
4. धर्मपद के चरित्र की विशेषताएँ लिखिए।
5. कोणार्क के किस पात्र ने आपको अत्याधिक प्रभावित किया है? कारण सहित लिखिए।
6. धर्मपद ने कोणार्क के कलश को स्थापित करने में किस प्रकार सहायता की? समझाइए।
7. **नीचे दी गई पंक्तियों की व्याख्या कीजिए :-**

(क) ''हमने पत्थर में ..... खड़ा कर दिया है। ''

(ख) ''शिल्पी को.....मुझे उसकी कला चाहिए।''

(ग) ''शिल्पी तुम.....काल की गति।''

(घ) ''जीवन के आदि .....जीवन अधूरा है।''

(ड़) ''मैं तो एक ऐसे..... ओझल हो गया है।''

8. **निम्नलिखित वाक्यों का भाव विस्तार कीजिए -**

1. ''कला जीवन भी है और जीवन-यापन का साधन भी ।''

2. '' जीवन के आदि और उत्कर्ष के बीच एक और सीढ़ी है– जीवन का पुरुषार्थ।''

भाषा अध्ययन–

1. निम्नलिखित शब्दों में उपसर्ग ओर प्रत्ययों का प्रयोग हुआ है। इन शब्दों से उपसर्ग, प्रत्यय पृथक करके लिखिए–

   प्रतिष्ठापन, विचित्र, ओजमयी, प्रतिभावान, निर्द्वन्द्व, कायरपन, निष्क्लुष, रमणीयता, अरुणिमा, निराधार।

2. निम्नलिखित शब्दों के पर्यायवाची शब्द लिखिए–

   पृथ्वी, नरेश, गगन, जंगल, सूर्य।

3. निम्नलिखित शब्दो के हिन्दी रूप लिखिए।

   हरेक,खबर,साफ,चीज़,निगाह,साल।

4. निम्नलिखित मुहावरों का अर्थ लिखते हुए उनका वाक्यों में प्रयोग कीजिए–

   मुँह छिपाना, राह पर लाना, घमण्ड चूर करना, छूमन्तर होना, पंख लगना, भण्डाफोड़ होना।

और भी जानिए–

जब सामान्य क्रिया के वाक्यों को प्रेरणात्मक क्रिया के रूप में परिवर्तित किया जाता है। तो प्रेरणार्थक क्रियाओं के प्रयोग में प्राय: अशुद्धियाँ हो जाती हैं। हिन्दी मे क्रिया का प्रथम प्रेरणात्मक रूप प्राय: 'आ' जोड़कर तथा द्वितीय प्रेरणात्मक रूप 'वा' को जोड़कर बनाया जाता है जैसे –

मूल क्रिया	**प्रेरणार्थक**	**द्वितीय प्रेरणार्थक**
पीना	पिलाना	पिलवाना
लिखना	लिखाना	लिखवाना
करना	कराना	करवाना

वाक्यगत प्रयोग

बच्चा दूध पीता है। – माँ बच्चे को दूध पिलाती है।

माँ आया से बच्चे को दूध पिलवाती है।

5. निम्नलिखित अशुद्ध वाक्यों को शुद्ध कीजिए

   अ. मानो स्वप्न भ्रष्ट हुई हो।

   आ. यह कलश छप्र पर नहीं टिकती।

   इ. कोणार्क की सूर्य मन्दिर प्रसिद्ध है।

ई. क्या ये पाषान मूर्तियाँ ऊर्ध्वगामी हो जाएँगे?

6. निम्नलिखित अनुच्छेद में यथा स्थान विराम चिह्नो का प्रयोग कीजिए–

हमनें जो मूर्तियाँ इसके स्तम्भों इसकी उपपीठ और अधिस्थान में अंकित की हैं उन्हें ध्यान से देखो देखते हो उसमें मनुष्य के सारे कर्म, उसकी सारी वासनाएँ मनोरंजन और मुद्राएँ चिन्हित है यही तो जीवन है

योग्यता विस्तार

1. प्रस्तुत एकांकी का विद्यालय के किसी समारोह मे अपनें सहपाठियों के साथ अभिनय कीजिए।
2. प्रस्तुत एकांकी को कहानी रूप में परिवर्तित कीजिए।
3. कोणार्क तथा अन्य ऐतिहासिक महत्व के दर्शनीय स्थलों की जानकारी एकत्रित कीजिए।
4. अपने प्रदेश के प्रमुख मंदिरों की जानकारी एकत्र कीजिए।
5. अपने निकट के किसी प्राचीन मंदिर अथवा ऐतिहासिक इमारतों का अवलोकन कर उसके कला–शिल्प को समझिए।
6. प्रस्तुत एकांकी के आधार पर कोणार्क पर एक संक्षिप्त टीप लिखिए।
7. पुस्तकालय में उपलब्ध दर्शनीय स्थलों से संबंधित पुस्तकों का अध्ययन कीजिए।

शब्दार्थ

पाषाण कोर्त्तक– *पत्थर की मूर्ति बनाने वाला,* ***पार्थिव***– *भौतिक,* ***वीरशृंखला***–*जंजीर,* ***सुवर्ण शृंखला***– *सोने की कड़ियाँ,* ***कटकमुद्रा***–*नृत्य की मुद्रा* ***उत्कल*** – *आज का उड़ीसा,* ***दण्डपाशिक***–*डंडा रखने वाले सैनिक,* ***महामात्य***–*मंत्री,* ***बंगप्रदेश***–*बंगाल,* ***यवन***–*मुगल,* ***निर्निमेष***–*अपलक देखना,* ***कीर्तिस्तम्भ***–*यश का स्मारक,* ***उत्कीर्ण***–*उकेरना,* ***प्रतिष्ठापन***–*स्थापित करना ,* ***गीत गोविन्द***–*जयदेव लिखित रचना,* ***कण्ठहार***– *गले में पहनने की माला,* ***रागिनी***–*लययुक्त संगीत,* ***निर्माता*** – *बनाने वाला,* ***विषाद*** – *दुख,* ***निराश्रिता***–*बेसहारा,* ***पाषाण*** – *पत्थर,* ***उपपीठ***–*सहस्थान* ***आशु-शिल्पी***– *जन्मजात कारीगर,* ***अधिस्थान***– *मुख्य स्थान/आधार स्थान,* ***उत्कर्ष*** –*उन्नति,* ***पुरूषार्थ*** – *उद्देश्य की प्रप्ति के लिए उद्योग करना (पुरूषार्थ चार माने गए हैं धर्म अर्थ, काम और मोक्ष),* ***महादण्डपाशिक*** – *दण्ड देने वाला बड़ा अधिकारी,* ***वेत्रासन*** – *बेंत का आसन,* ***तोशक***–*रूई भरा बिछावन रजाई* ***प्राचीर***–*दीवार,* ***भंडाफोड***–*रहस्य उद्घाटित होना,* ***प्रतिहारी***–*द्वारपाल,* ***षड़यंत्र***–*कुचक्र* ***नेपथ्य*** –*मंच के पीछे जगह जहाँ नये की वेश रचना की जाती है।* ***कुठाराघात***– *भीषण आघात,* ***प्रतारणा***–*डाँट फटकार, सताना,* ***छप्र***–*छत, अम्ल–मंडप का ऊपरी खाली भाग,* ***अन्तर्मुखी***–*भीतर की ओर, अन्दर की ओर,* ***स्वप्नभ्रष्ट***–*सपना टूटा हो, नष्ट हुआ हो।*

***